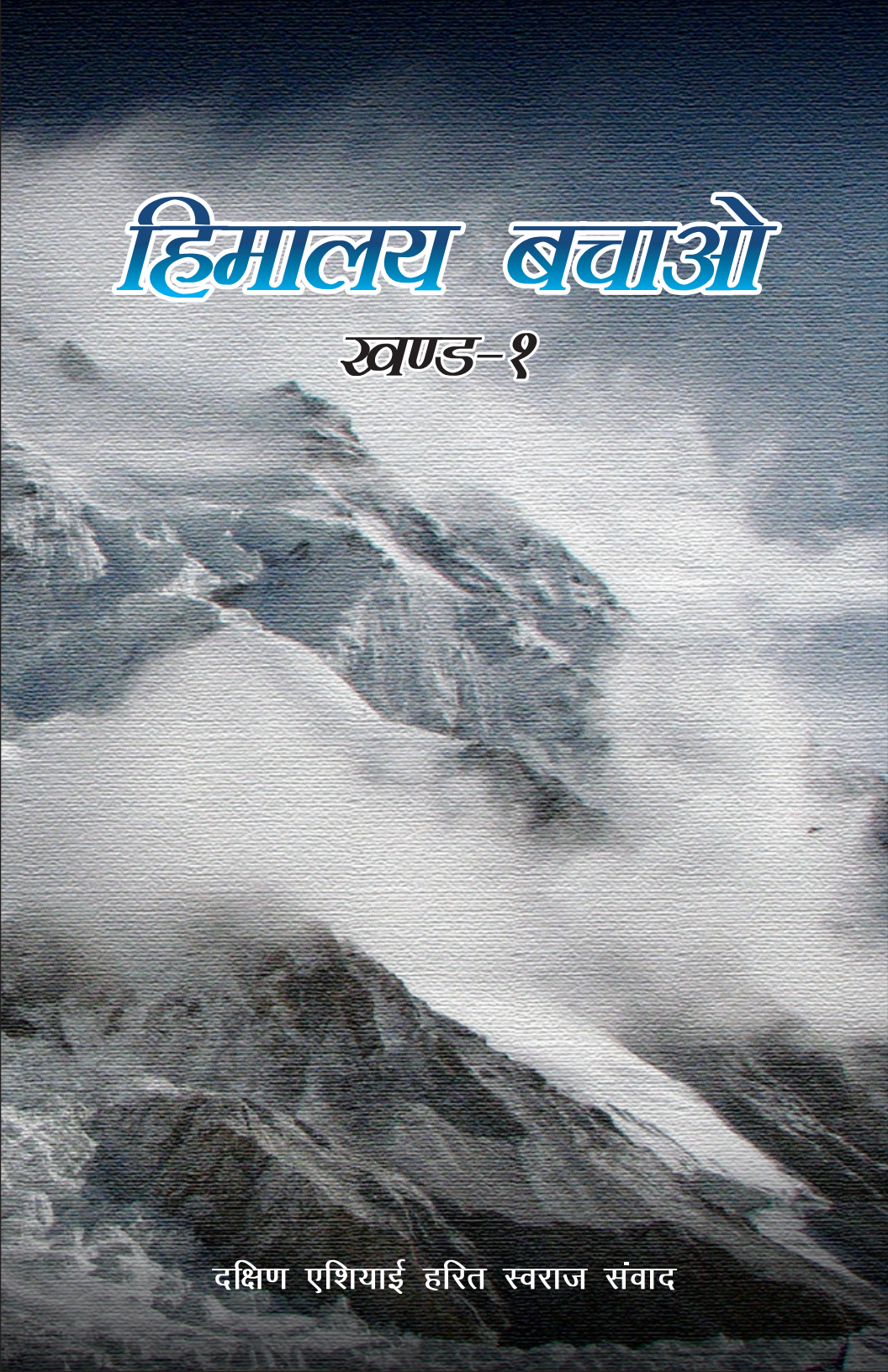

# हिमालय बचाओ

## खण्ड-१

दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद

# हिमालय बचाओ

## खण्ड–१

'हिमालय बचाओ' विषय पर दिल्ली के
कांस्टीट्यूशन क्लब में दिये गये वक्तव्यों
का संपादित संकलन
(हिमालय दिवस, 9 सितम्बर 2011)

© सर्वजन सुलभ, 2017
अपने नज़रिए से इसे इस्तेमाल करने, पुनर्प्रकाशित करने के लिए आप स्वतंत्र हैं। हमें सूचना देंगे तो अच्छा लगेगा।

प्रकाशक

**दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद**
(साउथ एशियन डॉयलॉग्स ऑन इकोलोजिकल डेमोक्रेसी)
सिएमनपूँ फाउंडेशन, फिनलैंड, के वित्तीय सहयोग से
बी ई – 14 ए, डी.डी.ए. फ्लैट्स,
मुनिरका, नई दिल्ली – 110067
ईमेल : networkscommunication@gmail.com

DAANISH BOOKS
दानिश बुक्स्
संपादकीय कार्यालयः 13 सी, स्काईलार्क अपार्टमेंट्स,
गाजीपुर, दिल्ली– 110096
www.daanishbooks.com

ISBN : 978-93-81144-66-4

Published by:

South Asian Dialogues on Ecological Democracy (SADED)
(With financial support from Siemenpuu Foundation, Finland)
B E - 14 A, D.D.A. Flats,
Munirka, New Delhi- 110067
Phone: 011- 26101580
Email: networkscommunication@gmail.com

**Printed by Multiplexus (India)**
multiplexusindia@gmail.com

# विषय सूची


1. प्रकृति और मानव के बीच सामंजस्य की जरूरत 06

2. हिमालय सिर्फ तीस प्रतिशत भू–भाग का हिस्सा नहीं 09

3. आज सबकी निगाह हिमालय की संपदा पर 12

4. अमेरिकी उपभोगवादी स्वर्ग से बचें 16

5. हिमालय सिर्फ हिमालयी लोगों की चिंता का विषय नहीं 20

6. हिमालय आज भी लोगों के लिए केवल पर्यटन स्थल 23

7. उत्तराखंड का विकास भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप हो 25

8. मिलकर लड़ें हिमालय की लड़ाई 27

9. THE FUTURE OF HIMALAYAS IS AT STAKE 29

10. WE HAVE TO SAVE THE HIMALAYAS 31

# प्रकृति और मानव के बीच सामंजस्य की जरूरत

**–अगाथा संगमा**

**मेरे** राज्य में कुछ ऐसी जगह हैं जिसे संरक्षित क्षेत्र कह सकते हैं। इन क्षेत्रों में कोई भी व्यक्ति किसी जानवर को नहीं मार सकता और न ही पेड़–पौधों को कोई नुकसान पहुंचा सकता है। इस तरह के विचार हमारे लोगों में होने चाहिए कि हम अपनी प्राकृतिक धरोहरों को संभाल कर रखें, उस पर अनावश्यक हस्तक्षेप न करें। हमारी कोशिश होनी चाहिए कि हम हिमालय को सुरक्षित व संरक्षित रख पायें। हमें सबसे पहले हिमालय के ऐतिहासिक महत्व को समझना बहुत जरूरी है।

भारत में अगर पर्यावरण को लेकर हुए आंदोलनों को देखेंगे तो 1973 में जो चिपको आंदोलन हुआ था, वह आन्दोलन पर्यावरण के आन्दोलनों को परिलक्षित करता है। आज देश में जो भी नीतियां बन रही हैं उस पर तो हम खूब चर्चा करते हैं लेकिन ऐतिहासिक रूप से हमें यह समझने की जरूरत है कि हमारे लोग पहले से ही पर्यावरण को लेकर संवेदनशील और जागरूक रहे हैं। बड़ी बात यह है कि पर्यावरण को लेकर जो जागरूकता आयी वह सर्वप्रथम हिमालयी क्षेत्रों के लोंगों में ही आयी। यह बात इस ओर इंगित करती है कि हमें हिमालय और हिमालयी समाज को हमेशा केन्द्र में रखकर ही पर्यावरण के बारे में विचार करना चाहिए।

केन्द्र सरकार में होने के नाते मुझे कई पर्यावरणविदों ने कहा कि हम कैसे हिमालय को लेकर सांसदों का ध्यान इस ओर केन्द्रित कर सकते हैं? इस पर मैं कहना चाहूंगी कि इस ओर पहल करते हुए हमने हिमालयी राज्यों के सांसदों का एक फोरम बनाया था लेकिन अब तक एक ही बार हमारी मीटिंग हुई है और इस सत्र में भी हम मीटिंग नहीं कर पाये। **पर्यावरण को लेकर सचेत और पूरी निष्ठा से काम कर रहे अनिल जोशी जी ने मुझे एक साल की मोहलत दी है कि इस दिशा में मैं प्रयास करूं।**

मेरी कोशिश है कि हमारा फोरम सक्रिय रूप से काम करे और पर्यावरण के प्रति जागरूकता की ओर बढ़े। सांसदों का मानना है कि हिमालय जैसे विषय पर केन्द्र ज्यादा रूचि नहीं दिखाता। मैं आप लोगों से कहना चाहूंगी कि हाल–फिलहाल अन्ना हजारे के आंदोलन में लोगों ने सक्रिय और निस्वार्थ भाव से भागीदारी की। यह ऐसा मुद्दा है जिसे लेकर लोगों में आक्रोश है और यही कारण है कि लोगों ने एकता दिखाकर अन्ना हजारे जी के आंदोलन को देशव्यापी बनाया। मैं आपका ध्यान अपने क्षेत्र में एक ऐसी लड़की की ओर ले जाना चाहती हूं जो पिछले 11 सालों से एक एक्ट को खत्म करवाने के लिए अनशन

पर है। उनका नाम है इरोम शर्मिला। आप लोगों में से कुछ ने यह नाम सुना होगा या कुछ ने नहीं भी सुना होगा। वो ए.एफ.एस.पी.ए. को खत्म करने की मांग कर रही हैं। 11 साल कम नहीं होते। उन्होंने 11 सालों से कुछ नहीं खाया, कुछ नहीं पिया लेकिन आज भी उनका जो संघर्ष है वो अकेला संघर्ष है। आज भी वे अस्पताल में हैं। उनका अनशन तोड़ने के लिए उन्हें जबरदस्ती खिलाने की कोशिश की जाती है। उन्हें नाक के जरिए से तरल पदार्थ दिया जा रहा है। बड़ी अजीब बात है कि उनके संघर्ष को आज तक कोई तवज्जो नहीं दी गयी और न ही उनके संघर्ष को वो ताकत और परिणाम मिला जो अन्ना हजारे जी को 12 दिन में मिल गया। यह शायद इसलिए है कि उन्होंने जो आन्दोलन शुरू किया वो दिल्ली में दवाब नहीं बना पाया जैसा अन्ना जी के आन्दोलन ने बनाया।

मैं यह भी कहना चाहूंगी कि इरोम शर्मिला जिस मुद्दे को लेकर संघर्षरत हैं वह बहुत महत्वपूर्ण मुद्दा है। ए.एफ.एस.पी.ए. मानवाधिकार का हनन करता है। इस एक्ट की आड़ में लोगों को बेवजह सताया जा रहा है। अन्ना हजारे जी और इरोम शर्मिला के जो आंदोलन हैं वो दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण हैं लेकिन इरोम का आंदोलन इसलिए किसी मुकाम पर नहीं पहुंचा कि वह नेशनल फिगर नहीं है और वह नार्थ ईस्ट में ऐसी जगह आंदोलनरत हैं जहां उसे मीडिया भी समर्थन नहीं करता। मेरे ख्याल से अगर हम इस मुद्दे को हिमालय के प्रति जागरूकता या लोगों में संवेदना से जोड़ कर देखें तो यही समझ में आता है कि हिमालय को लेकर जो बहस है वह आम तौर पर हिमालय तक ही सीमित है।

इस मुद्दे को हम अभी तक व्यापक स्तर पर नहीं ले जा पाए हैं। हमें केन्द्र में बहस संचालित करनी पड़ेगी तभी हम कुछ सार्थक कर पाएंगे। जोशी जी ने जो रिपोर्ट मुझे दी है उससे एक आशा भी जगती है कि आज हिमालय दिवस देश के कई राज्यों में मनाया जा रहा है। इसमें मीडिया भी सहयोग कर रहा है। मेरा मंत्रालय ग्रामीण विकास मंत्रालय है। हम आमतौर से ग्रामीण क्षेत्रों पर केन्द्रित योजनाओं पर ही काम करते हैं। यह मंत्रालय उन इलाकों को चिन्हित करता है जहां ग्रामीण ढांचागत विकास कम है। हम अपने मंत्रालय के माध्यम से सिर्फ रेगुलर स्कीम को ही वहां तक ले जा पाते हैं जैसे पीएमजीएसवाई, जो रूरल कनेक्टिविटी के लिए होता है या ग्रामीण स्वास्थ्य या स्वच्छता। मेरी जानकारी के अनुसार हमारे मंत्रालय में एक नई स्कीम जोड़ी गयी है 'नेशनल रूरल लाइवलिहुड मिशन' यह बहुत ही महत्वपूर्ण स्कीम है। इससे हिमालयी क्षेत्रों को खासकर फायदा होगा।

मैं एक किताब पढ़ रही थी जो राम चन्द्र गुहा की है। उन्होंने उत्तरी अमेरिका, पश्चिमी देशों और भारत के पर्यावरण को लेकर हुए आन्दोलनों की तुलनात्मक समीक्षा की है। किताब के अनुसार उत्तरी अमेरिका में पर्यावरणीय आंदोलन इस दर्शन के आधार पर होता है कि प्रकृति को यह अधिकार है कि वह अपने लिए जीवित रहे। उसे खुद को स्वस्थ्य रखने का अधिकार है। इसीलिए उत्तरी अमेरिका में बड़े–बड़े राष्ट्रीय पार्क बनाए गये हैं जहां जानवरों और पेड़–पौधों को संरक्षित रखा जाता है। उनके आंदोलनों में प्रकृति

केन्द्र में रहती है। वहीं भारत में हम पर्यावरण को हमेशा लोगों की आजीविका से जोड़ कर देखते हैं। **अगर हमें हिमालयी क्षेत्रों को उनकी मूल प्रकृति के साथ ही रखना है तो हमें अपने आंदोलनों में उन लोंगों को शामिल करना होगा जो वहां रहते हैं, जिनके आजीविका के साधन हिमालय क्षेत्र पर निर्भर हैं, तभी हम 'नेशनल रूरल लाइवलीहुड मिशन' के अंतर्गत हिमालयी क्षेत्रों में स्थिर रोजगार स्थापित कर सकते हैं।** मुझे लगता है कि यह सफल भी होगा।

प्रकृति और लोगों की आजीविका, जो प्रकृति पर निर्भर है, उसके बीच हमेशा एक तरह का अंतर्द्वंद बना रहता है। यह एक तरह से प्रकृति और मानव के बीच झगड़े जैसा है। इसलिए यह जरूरी है कि दोनों में सामंजस्य बनाने की कोशिश हो और तभी हम दोनों को एक साथ जोड़कर आंदोलन खड़ा कर पाएंगे जो दोनों के बीच भाईचारा का भाव पैदा करता हो न कि दुश्मनी का।

मैंने कई केन्द्रों को स्थापित करने की कोशिश की है जिसमें हम ग्रामीण आजीविका के साधनों का विकास करेंगे और ये ग्रामीण आजीविका के साधन स्थिर होते हैं। इसमें प्रकृति को नुकसान नहीं होता। वन क्षेत्रों को केन्द्र में रखकर हमने खाद्य पदार्थों को संरक्षित करने के लिए इकाइयों को स्थापित किया है। क्योंकि जो भी वन उत्पादन होता है वो आमतौर पर लोगों द्वारा अनदेखा कर दिया जाता है।

**अगाथा संगमा**
**तत्कालीन केंद्रीय ग्रामीण विकास राज्य मंत्री**
**भारत सरकार**

# हिमालय सिर्फ तीस प्रतिशत भू–भाग का हिस्सा नहीं

**– हरीश रावत**

**मेरा** मानना है कि हिमालय को समझने के लिए अगर आप सुंदरलाल बहुगुणा जी को सुन लें और समझ लें तो पर्यावरण के प्रति एक समझ बनती है। हमारे लिए यह भी बड़ी खुशी की बात है कि देश के नीतिकारों, विचारकों के बीच भी बहुगुणा जी का बड़ा सम्मान है।

पर्यावरण खासकर हिमालयी सरोकारों को उन्होंनें चिह्नित और चित्रित किया है। आज हम विकास के मानक को पर्यावरण से अलग रख कर देख ही नहीं सकते और न ही समझ सकते हैं। एक समय था जब हम लोग पर्यावरण नहीं बल्कि केवल विकास की बात करते थे। उस समय भी बहुगुणा जी हमको रास्ता दिखाते थे। सन् 1980 में जब वन संरक्षण के लिए कानून बनाने की बात हो रही थी तब हम जैसे लोग कानून के विरोधी थे। इस संबंध में बात करने के लिए जब हम लोग इंदिरा जी के पास गये तो हमने उन्हें कहा कि इससे हमारे राज्य का विकास रूक जाएगा।

तब उन्होंने कहा था कि विकास तभी होगा जब पहाड़ रहेंगे। यदि हम इस कानून को नहीं बनाएंगे तो पेड़ बचेंगे ही नहीं और जब पेड़ नहीं बचेंगे तो नदियां नहीं बचेंगी, देश नहीं बचेगा फिर तुम अकेले बचकर क्या तय करोगे? ये तुम्हारी आज की सोच हो सकती है लेकिन कल के उत्तराखंड को बनाने के लिए वहां के पहाड़ को बचाने के लिए यह कानून बनाना जरूरी है। मैं उस समय केवल 27–28 साल का था।

तब हमारी सोच का अपना दायरा था और जब उस कानून को बनाने के बाद जब चुनाव आया तब चुनाव के लिए हेलीकॉप्टर में जाते थे। तब आज की तरह सुरक्षा का तामझाम नहीं होता था। एक ही हेलीकॉप्टर में सब जाते थे। प्रधानमंत्री को आप नजदीक से देख सकते थे। साथ बैठ सकते थे। बात कर सकते थे। उसी हेलीकॉप्टर में मैं भी था। नीचे देखा कि अल्मोड़ा के जंगलों में आग लगी है तब वी.पी. सिंह हमारे मुख्यमंत्री थे वो भी साथ थे।

इंदिरा जी ने मुझे अपने पास बुलाया और कहा कि हरीश तुमको यहां से नीचे डाल देते हैं। मैनें कहा, 'जी मैं समझा नहीं!' तब उन्होंने कहा, 'तुम लोग संसद में तो खूब चपड़–चपड़ करते हो। देखो नीचे आग लगी है। कभी यहां के लोगों से भी बात करते हो?' इसके बाद जब हम लोग पिथौरागढ़ की जनसभा में पहुंचे तो इंदिरा जी का पूरा भाषण आग और पहाड़ के जंगलों पर था।

मुझे खुशी है कि हम समय के प्रवाह के साथ कई क्षेत्रों में आगे बढ़े हैं। मेरा मानना है कि जो लोग कहते हैं कि पहाड़ का पानी और युवा पलायन कर चुका है तो मैं कहूंगा कि यह स्वाभाविक प्रक्रिया है लेकिन इसे परिमार्जित किया जा सकता है। इनमें वो गुण पैदा किये जा सकते हैं जो मनुष्य के लिए या किसी भी क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं। हमारे सामने आज जो सबसे बड़ी कठिनाई आ रही है, वह है कि हिमालय का जो विकास है, जिसमें मैं शिक्षा समेत अन्य चीजों को भी जोड़ता हूं, उसका धरातल से अब कोई संबंध नहीं रह गया है। जब मैं जूनियर हाईस्कूल में पढ़ता था तब हमारे शिक्षक सफाई अभियान चलाया करते थे। हमारे कृषि के अध्यापक हमें बताते थे कि हम कैसे अपने घर के आस–पास फूल या पौधे लगाकर हरियाली बनाए रख सकते हैं। आज हम अपने बच्चों को नहीं बता रहे हैं कि पेड़–पौधों का क्या महत्व है। हमारी खेती के बारे में भी कोई जानकारी नहीं दी जा रही है जिस वजह से वो धीरे–धीरे छूट रही है।

आज हिमालयी क्षेत्रों के लिए खेती एक बड़ी चुनौती है। इस विषय पर हमारे नीति–निर्माताओं, पदाधिकारियों और सरकार को गम्भीरता से सोचने की जरूरत है। पहाड़ी खेती का संबंध बहुत सी चीजों से है जिसमें बागवानी भी शामिल है।

हम देख रहे हैं कि किस तरह मैदानों में थोड़ी–सी बारिश होने पर बाढ़ जैसी स्थिति बन जाती है। इसका सबसे बड़ा कारण है कि पहाड़ों में खेतों की खुदाई ही नहीं हो रही है। जब खुदाई ही नहीं होगी तो पानी कैसे ठहरेगा? पानी जमीन में नहीं जा पा रहा है। पानी ऊपर से बहकर गांवों में पहुंच रहा है और गांव में तो हमने सीसी मार्ग बना दिया है तो पानी तीव्र वेग से बहता, जमीन को काटता हुआ आगे बढ़ जाता है। आज भावर के जमीन कट रहे हैं। पानी तो बरस रहा है पर भूगर्भ का पानी लगातार कम हो रहा है। इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि पहाड़ की खेती छूट रही है। हमारे जंगल लगातार खत्म हो रहे हैं जो हमारी ऑक्सीजन हैं। जो सरकारी जंगल हैं वो तो सुरक्षित हैं पर बाकी जंगल, बागवानी और अन्य चीजें खत्म होती जा रही हैं।

अभी अमेरिका के साथ देहरादून में हम एक मीटिंग कर रहे हैं जिसमें इन क्षेत्रों से संबंधित सभी लोगों को शामिल किया जा रहा है। हम उस मीटिंग में पर्यावरण से संबंधित सभी मुद्दों पर बात करना चाह रहे हैं। साथ ही राज्य सरकार से बात करके कि किस तरह से पहाड़ के एग्रीकल्चर, होर्टीकल्चर को फिर से पुनर्जीवित किया जा सकता है, पर चर्चा होगी। मेरे लिए विकास का यह मतलब नहीं है कि हम अपनी बुनियादी चीजों को छोड़ दें। दुनिया में जिन देशों ने बहुत तरक्की की है, वहां अगर आप देखेंगे तो उन्होंने अपनी खेती और खेती में अपनी बुनियादी चीजों को नहीं छोड़ा है। उन्होंने अपनी बुनियादी चीजों को ही तकनीकी रूप से विकसित किया है। हमने तकनीक का मतलब यह लगाया है कि अपनी बुनियादी चीज को छोड़ दो और हम तो अब आधुनिक हो गये हैं, ज्ञानी हो गये हैं, बहुत आगे निकल आये हैं, अब पुरानी चीजें छोड़ दो! आप देखते ही हैं कि आज हमारा पढ़ा–लिखा वर्ग खेती से, जमीन से, बागवानी से अपनी संस्कृति से कट रहा है। हम उन्हें जोड़ कर नहीं रख सकते। मुझे लगता है कि जब इस तरह की गोष्ठियां होती हैं,

बातचीत होती है तो इसका मतलब है हम उस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। अगर देश हमारी नहीं सुनेगा तो देश उसकी कीमत चुकायेगा। आज दिल्ली में बैठकर प्लानिंग कमीशन या पॉलिसी बनाने वाले लोग या सरकार में बैठे लोग अगर यह मान रहे हैं कि एक छोटा सा उत्तराखंड है, एक छोटा सा हिमाचल है और जो भी मध्य हिमालयी क्षेत्र हैं ये क्या हैं? यहां तो नौ या दस या जम्मू–कश्मीर जोड़ लीजिए तो ग्यारह सांसद हैं, तो भारत की संसद के अंदर ये क्या ताकत रखेंगे? ऐसे में मेरा मानना है कि ये सांसद अपनी कीमत पर बैठेंगे। मध्य हिमालयी क्षेत्र एक ऐसा हिस्सा है जो सारे उत्तरी भारत की जलवायु के नियंत्रण का काम करता है। हमारे पास गंगा है, यमुना है। अनेक नदियों का उद्‌गम इन्हीं स्थानों पर है और दुनिया का बड़ा जलाशय हिमालय है और हम इसको सुरक्षित रखते हैं। अगर यह सूख जाएगा तो उत्तर भारत कहां से पानी पाएगा?

इसलिए देश के लोगों के लिए यह जरूरी है कि वे गम्भीरता से हिमालय के बारे में सोचें। आज की स्थितियों के अनुसार बहुत सारी चीजों में बदलाव की जरूरत है क्योंकि आज का भारत 1980 का भारत नहीं है। आज एक साधन–सम्पन्न भारत है। एक शक्तिशाली भारत है। एक महा शक्तिशाली भारत है इसलिए इस महा शक्तिशाली भारत को महान हिमालय के लिए गम्भीरता से सोचना चाहिए। आप लोग हिमालय दिवस मना रहे हैं। मैं तो चाहूंगा कि एक दिन ऐसा आये कि भारत की संसद कहे कि हम कई 'डे' मनाते हैं अब हम एक दिन 'हिमालय डे' भी मनाएंगे। मेरा यह भी मानना है कि हिमालय सिर्फ तीस प्रतिशत भू–भाग का हिस्सा नहीं बल्कि तमाम हिस्सों का रेगूलेटर है। अगर यह रेगूलेटर सही दिशा में काम करेगा तभी हमें ऑक्सीजन और जीवन मिलेगा और अगर यह सही दिशा में नहीं चला तो चाहे आप दस अपोलो और खोल लीजिए, कुछ नहीं हो सकता।?

**हरीश रावत**
**तत्कालीन केन्द्रीय श्रम राज्य मंत्री**
**भारत सरकार**

# आज सबकी निगाह हिमालय की संपदा पर

**–प्रदीप टम्टा**

**सुन्दर** लाल बहुगुणा जी भारत में ही नहीं पूरी दुनिया में हिमालय और तमाम प्राकृतिक संपदा को बचाने के संघर्ष में आंदोलनों के प्रणेता रहे हैं। मैं देख रहा हूं कि आज हिमालय पर सब की निगाह है। दो दिन पहले ही पर्यटन मंत्रालय ने एक बैठक की थी जिसमें हिमालयी राज्यों के सारे सांसदों को बुलाया गया था। वहां भी मैंने कहा था कि आज हिमालय पर सब की निगाह है। पर्यटन मंत्रालय की भी निगाह है, दुनिया के बड़े–बड़े मल्टीनेशनल से लेकर तमाम तरह के लोगों की नजरें हिमालय पर टिकी हैं। लेकिन पर्यटन मंत्रालय, जो इस देश की सभ्यता और संस्कृति को एक ब्रांड के रूप में देखना चाहता है, लेकिन हम चाहते हैं कि हिमालय अपनी प्राकृतिक स्वरूप में ही जिन्दा रहे।

मैं तो आज सांसद हूं। सांसद होना मेरे लिए बहुत बड़ी बात नहीं है, लेकिन जंगल के आंदोलनों से मैं पूरे सरोकारों के साथ जुड़ा रहा हूं। आज हम सब को लग रहा है कि हिमालय पर बड़ा संकट है। हिमालय से खासकर मध्य हिमालय से निकलने वाली नदियां गंगा, यमुना की संस्कृति से पूरा भारत विश्व में प्रसिद्ध है। सभ्यता और संस्कृति का स्रोत इस देश के भीतर नदियां हैं, जिनमें गंगा, यमुना का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये नदियां हिमालय से निकलती हैं। हिमालय और ये नदियां सभ्यता, संस्कृति के साथ–साथ करोड़ों लोगों को जीवन देने की अनमोल ताकत रखती हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल सब हिमालय से निकलने वाली गंगा–यमुना पर निर्भर है। लेकिन आज हालत ये हैं कि सबकी दृष्टि हिमालय पर ही केन्द्रित है। हिमालय के जो तीन महत्त्वपूर्ण सवाल हैं वो जल, जंगल और जमीन के हैं।

आप जानते ही हैं कि हमारे जंगल हमारी माता–बहनों, नौजवानों के आंदोलन जिसे आप चिपको आंदोलन और वन बचाओ आंदोलन के नाम से जानते हैं, से ही बचे। अगर ये आंदोलन न चला होता तो आज हिमालय के जो जंगल हैं न बचे होते और अगर हिमालय के जंगल न बचे होते तो इस देश के तमाम जंगल और प्राकृतिक संपदा भी न बची होती। क्योंकि इसी आंदोलन का परिणाम है कि इस देश के भीतर जंगल को लेकर नया विचार अपनाया गया। फॉरेस्ट कंजर्वेशन एक्ट लागू हुआ और आज जो वन संरक्षण अधिनियम है वो सबके गले की फांस बना हुआ है।

आज इस देश की सरकारें इस अधिनियम में किसी न किसी तरह की ढ़ील दे रही हैं। वो ढ़ील इसलिए दी जा रही है कि आज उड़ीसा, झारखण्ड और छत्तीसगढ़ में जो प्राकृतिक संपदा है उस पर सब की नजर है और इस देश की त्रासदी देखिए कि इन्हीं राज्यों में अकूत संपदा है और इन्हीं राज्यों में सबसे ज्यादा गरीबी है। वहां हमारी सरकार ने भी अपनी ही जनता के दमन के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दी है। ग्रीन हंट

से लेकर न जाने किन–किन हंटों का प्रयोग किया जा रहा है। देश के सबसे कमजोर लोगों के साथ ही राज्य सरकारें भिड़ी हुई हैं। किस चीज के लिए भिड़ी हुई हैं ये सरकारें? क्या आदिवासियों के विकास के लिए? नहीं! दरअसल ये जो मल्टीनेशनल कंपनियां हैं, ये कोयले से बिजली पैदा करने के लिए इन क्षेत्रों के संसाधनों पर नजर लगाये हुए हैं और उत्तराखण्ड में हाईड्रो पर नजर लगाये हुये हैं और सरकारें इनका साथ दे रही हैं।

मैं जिन तीन मुख्य सवालों–जल, जंगल और जमीन की बात कर रहा था उसमें जंगल तो जन आंदोलनों के दवाब में बने अधिनियमों के कारण हम बचा सके लेकिन अब इनकी निगाह हमारे जल और जमीन पर है। आज उत्तराखंड में कोई नदी नहीं बची होगी जो सुरंगों में नहीं जा रही है। एक वक्त था कि हमने टिहरी जैसे बड़े डैम के प्रोजेक्ट को संवारा। आज पूरी दुनिया बड़े डैम के खिलाफ है। मैंने तो सुना है कि यूरोप और अमेरिका में डैमों को तोड़ा जा रहा है लेकिन हमारे देश में अभी भी बड़े डैम के प्रति जो मोह है उससे मुक्ति नहीं मिली है। क्योंकि टिहरी से बड़ा डैम पंचेश्वर, जो भारत और नेपाल के बीच है, वो भी हमारे ऊपर लटक रहा है। आज नदियां टनल में जा रही हैं लेकिन हमारी चेतना नहीं जागी है।

सरकारें भी आगे नहीं बढ़ रही हैं। उत्तराखंड में शायद ही कोई नदी हो जो टनल में नहीं जा रही है। सवाल यह है कि जब एक नदी टनल से होकर गुजरती है तो उसका प्राकृतिक स्वरूप समाप्त हो जाता है। अगर नदी 20 कि.मी. टनल के अन्दर जाएगी तो उस 20 कि.मी. के क्षेत्र में जो आबादी है उनकी क्या स्थिति होगी? इस पर हम सबको विचार करने की जरूरत है। मेरा मानना है कि पानी न हमारी देन है ना ही सरकार की। यह नेचर की देन है। कोई इसे ईश्वर कहे कोई खुदा कहे, मैं इसे नेचर कहता हूं। जब यह नेचर की देन है तो इसे इसके प्राकृतिक रूप में ही रहने दीजिए। इन्हीं नदियों के अस्तित्व पर भारत की सभ्यता और कृषि टिकी है। हमारे देश के बड़े–बड़े वैज्ञानिकों ने कहा कि नदियों को जोड़ देना चाहिए। मैंने भी कहा कि अच्छा सुझाव है! नदियों में पानी नहीं पर उसको जोड़ने की स्कीम चल रही है। यह पूरी तरह से नेचर के खिलाफ का विज्ञान है। अगर आप चाहते हैं कि देश विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में आगे बढ़े तो क्यों नहीं हम सोलर को टैप कर रहे हैं? हम यदि परम्परागत रूप से देखें तो बहुत से लोग बताते हैं कि वे सब्जी से लेकर मांस तक, किसी विधि से सूरज की ऊर्जा से ही उसे पकाते थे। वो भी तो विज्ञान ही था। जिन लागों, जिन किसानों को हम अनपढ़ कहते हैं, जिन्हें हम विज्ञान विरोधी कहते हैं उन्होंने भी अपनी साधारण बुद्धि से सूर्य की ऊर्जा का खाद्य पदार्थों को 6–6 महीने तक सुरक्षित रखने के लिए उपयोग किया। चीन आज सौर ऊर्जा के क्षेत्र में पूरी दुनिया में एक बड़ी ताकत बन रहा है। आपको बिजली की जरूरत है तो विज्ञान को आगे बढ़ाएं, तकनीक को बेहतर बनाएं। वैसे विज्ञान आगे बढ़ तो रहा है लेकिन यह जब हमारे सामने नये तरीकों, नये साधनों के रूप में सामने आ रहा है तो इसने हमको ऊर्जा की जरूरतों के लिए पानी से दूर किया है।

मैं न्यूक्लियर के पक्ष में था लेकिन जब जापान के फुकोशिमा में जो हुआ, उसके बाद मेरे विचार में बदलाव आया और मैंने नये तरीके से सोचना शुरू कर दिया। इस देश

को अगर आगे बढ़ना है तो हाइड्रोपॉवर से बिजली बनाने का सिद्धांत छोड़ना होगा। इस तरह के दर्शन से मुक्त होना होगा। तभी जाकर यहां के खेत और लोगों को पानी मिलेगा। पानी का उपयोग सबसे ज्यादा देश की कृषि और पेयजल की समस्या को दूर करने के लिए है। आज हिमालय की यही त्रासदी है कि वहां न पेयजल के लिए पानी है न खेत की सिंचाई के लिए। हमारी नदियां विलुप्त होती जा रही हैं। आने वाले समय में नदियां इसी तरह विलुप्त होती रहेंगी तो उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल पर सबसे बड़ा संकट आ पड़ेगा। आज से 50 साल पहले हम यही सोचते थे कि सरस्वती देश की एक उभरती हुई नदी है लेकिन अब विश्वास करना मुश्किल है कि सरस्वती नाम की कोई नदी भी रही होगी।

मानव द्वारा प्रकृति और भविष्य के प्रति चिंतित न होने के कारण सरस्वती इतिहास के काल में चली गई। आज सरस्वती केवल लोगों के विचार में है। कहीं ऐसा न हो कि गंगा, यमुना का भी यही हश्र हो। इसलिए हम सब को गम्भीरता से सोचना होगा। पानी की ही तरह जमीन का भी सवाल है। इस पर मैं ज्यादा नहीं कहूंगा। दिल्ली में बारिश होती है तो हमारी धड़कन तेज हो जाती है कि हम मोटरसाईकिल या स्कूटर कैसे निकालेंगे? लेकिन हमारे हिमालय में यह चिन्ता होती है कि न जाने क्या होने वाला है? कितने घरों में तबाही होगी? किस परिवार के साथ क्या होगा? सरकार को आज हिमालय के प्रति नये दृष्टिकोण से देखने और चिंतन करने की आवश्यकता है। सरकारें इस मामले में कुछ आगे बढ़ी भी हैं। प्लानिंग कमीशन भी कह रहा है कि माउंटेन के संदर्भ में हम नये सिरे से विचार करें। लेकिन मुझे लगता है कि मुख्य सवाल यह है कि हिमालय की जो संपदाएं हैं वो न हमारी हैं न किसी और की। वो प्रकृति ने दिया है। अगर हम भविष्य के लिए इसे संरक्षित नहीं कर पाये तो हिमालय में बहुत बड़ा संकट आएगा। आज हिमालय में जो सड़कें बन रही हैं उसके लिए कोई वैज्ञानिक सोच नहीं है।

टिहरी डैम से पास स्लाईड को रोकने की व्यवस्था की गयी है। लेकिन उत्तराखंड में कहीं और ऐसी व्यवस्था नहीं है। चाहे वो केन्द्र की सड़क हो या राज्य की। टिहरी डैम में भूस्खलन को रोकने के लिए जो प्रयोग किया गया था तब मैंने ये सवाल किया था कि अन्य जगह तो स्लाईड को रोकने के लिए ऐसा प्रयोग तो नहीं है! तो मुझे बताया गया कि यह बहुत खर्चीली टैक्नोलॉजी है। यानी इस देश में खर्लीची टेक्नोलॉजी सिर्फ बड़े लोगों के लिए है। आम आदमी के लिए सिर्फ साधारण टेक्नोलॉजी! आम आदमी पर अधिक खर्च करने को हम तैयार नहीं हैं! हमारा विज्ञान हमारा दिमाग उस खर्चीली तकनीक तो सस्ती बनाने के लिए तैयार नहीं है। इसलिए हम सब को हिमालय के लिए नयी सोच के साथ गम्भीरता से विचार करना होगा। चाहे वो हिमालय की कृषि के संदर्भ में हो या विकास के किसी अन्य संदर्भ में। दो सालों से जो हिमालय दिवस मनाने की शुरुआत हुई है, यह अभी सिर्फ शुरुआत है और हर चीज अपने शुरुआत में कमजोर होती है, जैसे कि सुबह की किरण प्रकाश तो देती है लेकिन उसमें ताकत नहीं होती पर दोपहर होने तक उसमें प्रचण्ड ताप आ जाता है। मैं समझता हूं कि हम सब लोग जो भी हिमालय से सरोकार

रखते हैं और इस देश–दुनिया के हिमालय को बचाना चाहते हैं, दुनिया में मानव सभ्यता, संस्कृति को जिन्दा रखना चाहते हैं तो सब को मिलकर इस प्रयास में भागीदारी करनी होगी। तभी सरकारें सोचने को विवश होंगी।

अभी हम इसे जनता के स्तर पर मना रहे हैं, हो सकता है कल सरकारी स्तर पर हिमालय दिवस मनाया जाए क्योंकि सरकारी स्तर पर मनाने से एक प्रभाव यह पड़ता है कि सरकार नीतिगत परिवर्तन के लिए, बदलाव के लिए बाध्य हो जाती है। मुझे याद है कि 6,7,8 अक्टूबर 1974 में जब हम दस बारह लोग नैनीताल की सड़कों पर यह गा रहे थे कि 'हिमालय को बचाना है' जिसमें गिर्दा हुड़का बजा रहे थे तो हम लोगों के बारे में लोग सोचते थे कि ये कौन पागल आ गये हैं हिमालय को बचाने। आज दुनिया कह रही है कि हिमालय को बचाना है। क्लाईमेट चेंज को लेकर बड़े–बड़े एनजीओ काम कर रहे हैं। सब की चिंता में हिमालय आ रहा है। उस वक्त हम पागलों की जमात कहे जाते थे। यह इस बात का प्रतीक है कि जब हम किसी परिवर्तन या नये सोच की बात करते हैं तो कम लोग ही हमारे साथ होते हैं पर जब उसकी मार्केट वैल्यू बढ़ जाती है तो सारी दुनिया आती है। हमारा यह प्रयास सफल होगा। मित्रों, हिमालय बचेगा तो देश बचेगा, देश बचेगा तो दुनिया बचेगी।

**प्रदीप टम्टा**
**राज्यसभा सांसद**

# अमेरिकी उपभोगवादी स्वर्ग से बचें

**–विजय प्रताप**

**हिमालय** के साथ–साथ अगर पूरी दुनिया में हिमालय को लेकर सरोकार नहीं होगा तो हिमालय नहीं बचेगा। हिमालय को दुनिया का तीसरा ध्रुव कहा जाता है। अब यह बात वैज्ञानिक तरीके से स्वयं स्पष्ट हो रही है। अगर हम इस शब्द, तीसरे ध्रुव के क्या मायने हैं, को पूरी गहराई से नहीं समझेंगे तो हिमालय नहीं बचेगा। हिमालय नहीं बचा तो सृष्टि पर जीवन भी बचेगा या नहीं यह निश्चित तौर पर कहना संभव नहीं है। आम तौर पर जो दूसरे तरह के अभियान होते हैं उसके केन्द्र में व्यवस्था होती है। उसमें राजकाज चलाने वाले केन्द्र में होते हैं। कुछ अभियान ऐसे होते हैं जिनके केन्द्र में वो लोग होते हैं जिसके हाथ में आर्थिक तंत्र होता है। लेकिन हिमालय बचाने वाले इस अभियान में ये सब तो केन्द्र में हैं ही, लेकिन हम सबको अपने आप को भी केन्द्र में रखना होगा। क्योंकि जब राष्ट्रीय आंदोलन हुआ था तो उसके आखरी दौर के जो नायक थे, मोहनदास करम चन्द गांधी, उनके जो निकटम शिष्य, चाहे वो सरदार पटेल हों या पंडित जवाहर लाल नेहरू, ये इन सवालों को नहीं समझते थे। गांधीजी अपने लेखन में, अपने आचरण में इस बात पर जोर देते थे कि ये दुनिया लालच में फंसेगी तो बचेगी नहीं। ये दुनिया सब की जरूरतों के लिए पर्याप्त है, लेकिन किसी भी एक व्यक्ति के लालच को पूरा नहीं कर सकती। गांधीजी के इस सूत्र वाक्य की, हमारे राष्ट्रीय नेतृत्व ने, जो आम तौर पर निजी स्तर पर बहुत सादगी, अनुकरणीय और आदर्शवादी जीवन जीते थे, उन्होंने भी खिल्ली उड़ाई। व्यक्तिगत बातचीत में तो खिल्ली उड़ाई ही, अक्सर दस्तावेजों में भी वो खिल्ली दिख पड़ती है। देश की जो आर्थिक, वैज्ञानिक और प्रोद्यौगिक नीतियां बनीं वो सब हिमालय, हमारी प्रकृति और हमारे लोक ज्ञान को नष्ट करने वाली बनीं।

पश्चिम से आया हुआ ज्ञान, विज्ञान और प्रोद्यौगिकी, इन तीनों के बारे में हमारा विश्वास ठीक वैसा ही था जैसे एक धर्मभीरु में, किसी भी चीज को लेकर, अंधी श्रद्धा हो जाती है। उसमें विवेक नाम की चीज नहीं होती। दुनिया को चलाने के लिए जहां आस्था चाहिए, तो साथ में विवेक भी चाहिए। लेकिन हमने आधुनिक ज्ञान–विज्ञान को एक अंधविश्वास से चलाया और उसमें अपने तमाम तरह के लोक ज्ञान को चाहे वो इमारत बनाने का लोकज्ञान हो, नदी–नालों को संजो कर रखने का लोकज्ञान हो, चाहे मरुस्थल में तालाब के माध्यम से सिंचाई का लोकज्ञान हो, तमाम लोक ज्ञान को या तो नष्ट किया या उसको हीनभाव से देखा। इसी वजह से आज वो देखने को नहीं मिलता। उसे खोजना पड़ रहा है। खेती के बारे में आज हमारा पारंपरिक ज्ञान लगभग नगण्य है। हमारे देश के जो आदिवासी हैं और उनकी जो प्रकृति और पर्यावरण के बारे में समझ है, उस समझ के बारे में हमारे भीतर जानने की कोई रूचि ही नहीं है। उसके प्रति हम में कोई विनम्रता नहीं है। पूरी दुनिया के साथ–साथ जब हमारे हिस्से में सुनामी आया तब आपको ध्यान होगा

कि एक ही द्वीप, अंडमान निकोबार ऐसा था जहां पर जन्तुओं, पक्षियों की गतिशीलता को देखकर वहां के आदिवासी भांप गये कि यहां सुनामी जैसी कोई प्रलयकारी घटना होने वाली है। वहां की सारी आबादी बिना पूर्वानुमान वाले वैज्ञानिक यंत्रों के ही समझ गई थी और समझकर सबको बचा लिया। आदिवासियों का प्रकृति से जो जुड़ाव है, जो समझ है उसके बारे में हमारे ज्ञान–विज्ञान प्रणालियों में इतना दम्भ है कि हम उसको जानना भी नहीं चाहते। ऐसी घटनाओं के बाद भी हमारे मन में कोई विनम्रता नहीं आती कि हम उस ज्ञान–विज्ञान को समझें।

मजे की बात है कि हमारे इस आंदोलन के केन्द्र में हम खुद और हमारे स्वयं शिक्षण ज्यादा हैं। हमारे जो कालवाह्य विचार हैं, अवैज्ञानिक ज्ञान और विज्ञान में जो आस्था है, विकास की अवैज्ञानिकता में जो आस्था है, आधुनिक ज्ञान के कुछ भ्रम हमारे मन में, हमारे दिमाग में समा गये हैं और सबसे बड़ा भ्रम यह है कि ये जो अमेरीकी कथाकथित उपभोगवादी स्वर्ग है वह संभव भी है, वांछनीय भी है। इसको अपने भीतर से निकालना है। जैसे भूत–पिशाच को उतारा जाता था। यह सबसे बड़ा मिथक है जिसके कारण से हमारे नदी–नाले, हमारा पर्यावरण, हमारा पूरा हिमालय और पूरी पृथ्वी खतरे की जद में है। इस भ्रम के बारे में हम कोई बात सुनने को तैयार नहीं हैं। मामूली सी भी कड़वी लेकिन सच्ची बात सुनने को तैयार नहीं हैं। हमारी मनःस्थिति यह है कि जो ईमानदार दुविधाएं हैं वो सुनने को तैयार नहीं हैं। चाहे हम किसी भी विचारधरा के हों, चाहे किसी भी पार्टी के हों।

हम हिमालय बचाने को लेकर गोष्ठी कर रहे हैं इसी संदर्भ में एक बात कहना चाहूंगा कि मैं मध्यप्रदेश क्लाईमेट एक्शन की चर्चा के लिए एक गोष्ठी में था उसमें वन मंत्री, पर्यावरण मंत्री, मुख्यमंत्री तमाम मंत्री–संत्री आये थे। उसमें आयोजक मेरे साथी लोग ही थे जिसमें मैं भी था। उसमें तमाम वैज्ञानिक, जो सत्ता में नहीं हैं जो सत्ता के किसी संस्थान विज्ञान केन्द्र में भी नहीं हैं, अगर उनके सामने आप हल्के से भी लोकज्ञान परंपराओं की बात करें और कहें कि खेती के अब भी बहुत से तरीके, ऐसी जानकारियां, तकनीकी उपलब्ध हैं जिसमें ऊर्जा की खपत नहीं होती। जिसमें पेस्टीसाईट नहीं लगाना पड़ता। जिसमें फर्टीलाइजर नहीं लगाना पड़ता। आपको मालूम है कि पेट्रोलियम प्रोडक्ट्स पर हमारी सबसे ज्यादा विदेशी पूंजी खर्च होती है और पेट्रोलियम प्रोडक्ट्स के खपत के कारण ही हमने पहले अपनी मुद्रा का अवमूल्यन किया। उसके बाद 1991 की नीतियां लागू हुईं तो उसके विकल्प के लिए अभी भी हमारे यहां जीवंत ज्ञान परम्पराएं हैं। ये बात अगर आप कहिए तो कथाकथित लोकज्ञान, विज्ञान के आंदोलन के नेताओं को जिन्हें मैंने देखा है कि उनकी मजबूरी हो जाती है यह कहना कि नहीं–नहीं वो सब ठीक नहीं है, उसको जांचना पड़ेगा, उसमें सामंती सड़न हो सकती है। मेरा कहना है कि आप जाति तोड़ो आंदोलन चलाओ, उस पर बहस करो। जाति के संस्कार पर बहस करो लेकिन समाज में, पूरी दुनिया में विषमता की अलग–अलग अभिव्यक्तियां होती हैं। हमारे यहां भी थीं और बहुत दुर्भाग्यपूर्ण चीज थी और है। उसके खिलाफ तो यहां बैठे हमारे बहुगुणा जी हैं जो

पूरी दुनिया में पर्यावरण बचाओ के अगुवा बने। इन्होंने उत्तराखंड की शिल्पकार जातियों के लिए लड़ते हुए कैसी–कैसी प्रताड़नाएं सुनी हैं, कैसे इनको आघात लगा था यह तो उत्तराखंड के साथी ही जानते हैं। जब एक मोर्चे पर पर्यावरण और विकास के सवाल पर बात हो रही हो तब दूसरे मोर्चे की बात उठाकर कह देना कि नहीं–नहीं ये बात तो अधूरी है, इसको तो जांचना पड़ेगा, ये सामंती सड़न, आदि का क्या औचित्य है?

हमारा इस तरह का अंधविश्वास आधुनिक ज्ञान और प्रौद्योगिकी में है। ऐसी नकारत का भाव, ऐसी अनास्था का भाव हमारी अपनी ज्ञान परंपराओं में है। जीने के तरीके के बारे में है। पहले के समय ऐसे मकान बनाए जाते थे, जिसमें आपको ए.सी. की जरुरत नहीं थी। लेकिन अब हमको शहरों में कोई हॉल उपलब्ध नहीं होता जहां बिना ए.सी. के मीटिंग संभव हो सके। ये जो अंतरविरोध हैं, इन अंतरविरोधों के बारे में अपनी समझ बनाकर नीति के स्तर पर इन चीजों को बदलवाने के लिए बहुत बड़ी राजनैतिक शक्ति चाहिए। लेकिन उस राजनैतिक शक्ति से पहले हमको अपनी समझ बढ़ानी पड़ेगी, साझे संगठन बनाने होंगे ताकि उस समझ के आधार पर जनता के बीच जाएं। लोकसंग्रह का काम करें और उस लोकसंग्रह के आधार पर जो लोकशक्ति खड़ी होगी उससे इस राज्य को अपनी नीतियां बदलनी पड़ेंगी। अर्थव्यवस्था का ढांचा बदलना पड़ेगा।

मध्य प्रदेश की बैठक में जो किसान आये थे, जो आदिवासी आये थे, आदिवासी महिलाएं आई थीं ये लोग सबसे अच्छा बोले। पर्यावरण का जो सवाल है उसमें जब तक कुओं को, तालाबों को, नदियों को नहीं बचाएंगे, वर्षा आधरित खेती कैसे करनी है? इन सब चीजों के बारे में बात नहीं करेंगे तो हम कैसा भी एक्शन प्लान बना लें, हम हिमालय को नहीं बचा सकते। हमारा जो दूसरा अंतरविरोध है अमरीकी स्वर्ग के बारे में, उसमें बाजारवाद के बारे में भी अंधविश्वास है। इस बार जो बारहवीं योजना बन रही है, उसका आप एप्रोच डाक्यूमेंट देखें। उसमें जल, जंगल, जमीन इन सब के बारे में जो कहा गया है, वो देखने लायक है। वो ईमानदार दस्तावेज है। अगर उसके हिसाब से योजना बनेगी तो हमारे पास एक ही सुन्दर लाल बहुगुणा हैं, लेकिन तब सौ सुन्दर लाल बहुगुणा भी होंगे, तब भी देश और हिमालय नहीं बचने वाला है। इस योजना में जो दृष्टि पत्र है उसमें कहा गया है कि पर्यावरण की इस ढंग से रक्षा करनी है कि वो बाजार के अनुकूल हो जाए।

शुरू में जब 91 में ये नीतियां शुरू हुई थीं तो लगता था कि हमारे लोकतंत्र को कॉरपोरेट अनुकूल बनाया जा रहा है। लेकिन इस बार के दृष्टि पत्र में यह साफ कह दिया गया है कि यह कॉरपोरेट कंट्रोल्ड होगा। ये इन शब्दों में नहीं कहा गया है लेकिन आप उसका पूरा मजमून पढ़ लीजिए, उसमें एकदम शुरू में ही कह दिया गया है कि विकास सिर्फ प्राईवेट सेक्टर ही कर सकते हैं और जल, जंगल, जमीन, सबको प्राईवेट सैक्टर के अनुकूल कर देना है। यह उसमें स्पष्टता से कह दिया गया है। अगर हम ऐसा नियोजन करते रहेंगे और उसी पार्टी के नियोजनकर्ता एक बात लिख रहे हैं और अभी आपके सामने उसी पार्टी के हिमालय के सांसद जो बोलकर गये, मुझे तो भरोसा ही नहीं हो रहा था कि ये दोनों सांसद, सत्तारुढ़ पार्टी के हैं। सिक्किम के सांसद पी.डी.राय ने जिस विद्धता

और सफाई से बात की, प्रदीप टम्टा जी ने जिस साफगोई से बात की जैसे वे हम लोगों के बीच आंदोलन समूहों में इन सवालों को उठाते थे, वैसे ही उसी पीड़ा से, उसी संवेदना से और उसी साफगाई से आज वो बात कर रहे थे। एक तरफ व्यवस्था है, जिसकी बहुत स्पष्ट दृष्टि है कि उसको अमरीकी उपभोगवादी स्वर्ग लाना है। उसको कारपोरेशन के माध्यम से देश में ग्रोथ रेट को बढ़ाना है। दूसरी तरफ हमारे पी.डी.राय हैं, प्रदीप टम्टा हैं, हमारे जैसे लोग हैं जो सत्ता के गलियारे से दूर हैं चाहे अपनी इच्छा के कारण दूर हों या चाहे सत्ता का चरित्र ही ऐसा हो गया है कि उसकी ओर देखने या सोचने का मन नहीं करता है। ये जो द्वैत है, इसके बारे में इस तरह के हमारे सभा–सम्मेलन भर से कोई रास्ता मिलेगा, इस बारे में मुझे संशय है। मैं इसके आयोजकों में जरूर शामिल हूं, एक कार्यकर्ता के नाते। पूरी दुनिया के सामने डेवलपमेंट डायनामाइज हैं, कॉंट्राडिक्शन्स हैं उनके बारे में आपस में हम ईमानदार बहस नहीं करेंगे तो हिमालय को बचाना, पर्यावरण की रक्षा करना, क्लाइमेट क्राइसेस की चुनौती से निपटना बहुत मुश्किल होगा।

इसलिए मैं विनम्र निवेदन करता हूं अपने तमाम सह आयोजक साथियों से कि ऐसी गोष्ठियों, सम्मेलनों के साथ–साथ हम अपने सामूहिक स्वाध्याय और चिंतन के लिए कुछ ऐसा कार्यक्रम चलाएं ताकि देश के सामने एक वैकल्पिक विकास की स्पष्ट तस्वीर रख सकें कि हिमालय की रक्षा इन कदमों से होगी और उसमें आदर्श और अंतिम लक्ष्य की बजाए आज जो परिस्थिति है उसमें पहले दो–तीन कदम क्या होंगे? उस पर एक राष्ट्रीय सहमति बनाने की कोशिश करें। उसमें विचारधाराओं, पार्टियों, संगठनों, वर्गों से ऊपर उठ कर सोचें। क्योंकि ये सवाल पूरी सृष्टि का और सृष्टि पर जीवन का है। यह मानववाद और राष्ट्र के दायरों से भी बड़ा सवाल है। हिमालय एक प्रतीक है, इसका अर्थ हमारी सृष्टि और हमारा परिवेश है।

**विजय प्रताप**
**संस्थापक संयोजक, दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद**

# हिमालय सिर्फ हिमालयी लोगों की चिंता का विषय नहीं

**–अनिल जोशी**

**मुझे** लगता है कि अब हिमालय को दो–तीन पहलुओं से देखे जाने की आवश्यकता है। पहला यह कि हिमालय को लेकर कई वर्षों से चिंता जतायी जा रही है लेकिन इस पर और अधिक गम्भीरता से चिंता होनी चाहिए। दूसरी बात ये कि इसमें राजनीतिक चिंता होना ज्यादा आवश्यक है क्योंकि अंततः निर्णय राजनीतिज्ञों को ही करना है और तीसरी बात ये कि हिमालय सिर्फ हिमालय के लोगों का नहीं है। इसका 90 प्रतिशत लाभ या जुड़ाव गैर हिमालयी क्षेत्रों को है; चाहे वो उत्तर प्रदेश हो, बंगाल हो, बिहार हो, राजस्थान की इन्द्रा नहर हो और सत्य तो ये भी है कि समुद्र का अस्तित्व भी हिमालय से ही है। ऐसी स्थिति में एक चिंता बराबर बनती है कि हिमालय की जब भी चिंता हो तो हिमालय को लेकर सिर्फ हिमालय के लोगों में ही चिंता नहीं होनी चाहिए बल्कि सभी में हो, तभी हम हिमालय के लिए कुछ कर पाएंगे।

हमारी जो नयी रणनीति हो उसमें यह कोशिश होनी चाहिए कि उन तमाम जगहों पर बात करने का बीड़ा उठाएं जो किसी न किसी रूप में हिमालय से जुड़े हैं। जिनका हिमालय से सरोकार है, चाहे वो अप्रत्यक्ष रूप में ही क्यों न हो। वे जब तक इस बड़े आंदोलन में साथ नहीं होंगे तो यह अधूरा होगा। (हमारे साथ माननीय मंत्री अगाथा जी हैं; वे केन्द्र में हिमालय का भी प्रतिनिधित्व करती हैं और ग्रामीण विकास; जो कि बड़ा विभाग है उसका प्रतिनिधित्व भी करती हैं। हिमालय का जो राजनैतिक पहलू है क्योंकि अगाथा जी इसी सरकार में हैं मैंने उनके सामने बात रखी कि आप हिमालय की तमाम शक्तियों को तो देखो लेकिन वैश्विक स्तर पर हमें देखना चाहिए कि हमारी स्थिति क्या है।) बड़ी अजीब बात है कि जब बिहार की किसी बात पर चर्चा होती है तो एक साथ कई हाथ खड़े होते हैं और खूब चर्चा होती है लेकिन हिमालय के हालात और दुनिया में माउंटेन में ग्लोबली जो पोलिटिकल रिप्रजेन्टेशन हैं वो बहुत कमजोर हैं। इसका कारण है कि हिमालय रिसर्च को लेकर बहुत ज्यादा चर्चा नहीं हो पाती।

हमने हिमालय दिवस की गोष्ठी के लिए अगाथा जी और कुछ सांसदों से जो हिमालय का प्रतिनिधित्व करते हैं अनुरोध किया था। हमने गैर हिमालयी सांसदों से भी अनुरोध किया था। मैं आप सब से अनुरोध कर रहा हूं कि अगले हिमालय दिवस से पहले आप जितने भी हमारे हिमालय से सांसद हैं, जितने भी मित्र हिमालय से सरोकार रखते हैं, आप अपने स्तर से, व्यक्तिगत संसाधनों से, अपने परिचय के माध्यम से निश्चित रूप से अपने सांसदों से बात करें। उस बातचीत में मुख्य रूप से दो मुद्दे हों। मैं आपको बताऊं कि हमारे साथ दो बड़े संवेदनशील सांसद हैं, प्रदीप टम्टा जी और पी.डी.राय। ये हिमालय

के मुद्दों पर हमेशा अग्रणी रहे हैं। आप लोग सभी सांसदों से मिलकर औपचारिक रूप से बातचीत करें। हिमालय दिवस मनाने के पीछे हमारा जो मुख्य उद्देश्य है वह है कि हम हिमालय को लेकर उसके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक पहलू पर गम्भीर चिंता करें।

मेरा अनुरोध है कि आप उनसे मिलकर दो मुद्दे; एक तो यह कि हिमालय को लेकर सरकार में संवेदनशीलता बढ़ाने को लेकर बातचीत और दूसरा कि अभी इस देश में 352 जगह हिमालय दिवस मनाया जा रहा है। हिमालय के विभिन्न कोनों में जुलूस निकल रहे हैं। मुझे लगता है कि लोगों में हिमालय को लेकर संवेदनशीलता बहुत ज्यादा है, गम्भीरता है। ये पर्व के रूप के अलावा गम्भीरता से किया जा रहा है। हम इस बात को बार–बार महसूस कर रहे हैं कि हिमालय को लेकर हमें बहुत कुछ सोचना होगा। अगाथा जी से मैं कहना चाहूंगा कि वे इस दिशा में पहल करेंगी, ऐसी मैं आशा करता हूं। आप के संज्ञान में, मैं एक और बात लाना चाहता हूं कि एक और चर्चा हो रही है, हिमालय के विभिन्न कोनों से कि दिल्ली देश का केन्द्र है इसलिए यहां हिमालय की उपस्थिति लगातार बनी रहे, क्योंकि जब हम एक छोटा सा हिस्सा थे उत्तर प्रदेश का तो उत्तर प्रदेश ने हमारे संवेदनशीलता को समझते हुए एक पर्वतीय मंत्रालय बना दिया तो वह उसी बात का द्योतक था कि वहां हिमालय की बात रखी जाए।

मैं अगाथा जी से अनुरोध करता हूं कि कम से कम हमारे जितने साथी हैं जो प्रतिनिधित्व कर रहे हैं संसद में उनके साथ हिमालय के मुद्दों को लेकर चर्चा करें। हिमालय के तमाम कोनों में हिमालय दिवस मनाया जा रहा है और अधिकांश अखबारों ने तो सम्पादकीय भी इसी मुद्दे पर लिखा है। सरकार से हमारा अनुरोध है कि विधिवत् रूप से हिमालय दिवस को सरकारी तौर पर भी घोषित किया जाए। एक अच्छी बात यहां पर कही गयी कि हिमालय दिवस के दिन ही हम हिमालय पर चर्चा क्यों करें? इस पर निरंतर चर्चा होनी चाहिए। मैं आपको बताऊं कि ऐसा हुआ है और चर्चा निरंतर जारी है। पिछली बार हिमालय दिवस के बाद तमाम जगहों पर कई कार्यक्रम हुए। राधा बहन ने बड़ी गोष्ठी कर हिमालय नीति पर चर्चा करवायी। सुरेश भाई ने कई गोष्ठियां करवायीं। इस तरह से भारत सरकार का जो कृषि मंत्रालय है उसमें हमारे कृषि और हिमालय को लेकर बात की गई। जिसमें हमारे मंत्री हरीश रावत उपस्थित थे। अभी पानी, वन, सब को लेकर बात हो रही है। ये तमाम गोष्ठियां जो हिमालय के संसाधनों को लेकर हो रही हैं, उनको संकलित करके हम एक हिमालय रपट तैयार कर रहे हैं जो काफी हद तक बन चुकी है। कुछ और गोष्ठियों को शामिल करके हम आपके सामने रपट प्रस्तुत करेंगे। मैं समझता हूं कि इतनी वर्षा के बाद भी सभी साथियों की उपस्थिति और उत्साह इस बात को दर्शाती है कि हिमालय के प्रति हमारी संवेदनशीलता बढ़ी है। मैंने सुना है दिल्ली जाम हो जाती है, लेकिन उसके बाद भी एक बात हम सब को सोच लेनी चाहिए कि हिमालय को लेकर गंभीरता इसलिए है कि हिमालय के हालात बहुत अच्छे नहीं कहे जा सकते।

पिछले कुछ समय से हिमालय पर जो लगातार हमले हो रहे हैं, बांधों के रूप में, और अन्य संसाधनों पर वो हम सबकी चिंता का विषय है। हमारे सांसद महोदय ने अपने

वक्तव्य में इस ओर इशारा भी किया था। इसलिए हिमालय को बचाने की लड़ाई हिमालय में ही रचे–बसे लोगों की ही नहीं है बल्कि जो संस्कृति और संस्कार इस देश को हिमालय ने दिये हैं जो सभ्यता हिमालय की नदियों में बसी है तो मैं समझता हूं इस आंदोलन की गूंज हिमालय से लेकर गंगा और गंगासागर तक, समुद्र और आखिरी कोना कन्याकुमारी तक जाना चाहिए ताकि सामूहिक रूप से हम एक अच्छे, बेहतर देश की कल्पना कर पाएं जहां पर समुद्र, पहाड़, हिमालय सुरक्षित और संवरता हुआ दिखाई दे।

**अनिल जोशी**
**संयोजक (हैस्को)**

# हिमालय आज भी लोगों के लिए पर्यटन स्थल

**–श्रवण गर्ग**

**सर्वोदय** आंदोलन के साथ काम किया है इसलिए मैं हिमालय या इस तरह के आंदोलन की थोड़ी सी कमियां और मजबूतियां जानता हूं और पिछले 40 साल से मीडिया में काम कर हूं। अगाथा जी ने एक बहुत अच्छी बात कही कि अन्ना का आंदोलन क्यों सफल हुआ और शर्मिला की बात क्यों नहीं सुनी गयी। इस पर विचार और बहस कर सकते हैं और हिमालय को इससे जोड़ कर भी देख सकते हैं।

इरोम शर्मिला का आंदोलन मैं मणिपुर में देखकर आया हूं। मैंने सारी चीजें देखीं। आर्म फोर्सेस स्पेशल पावर एक्ट की जो त्रासदी है उसको हम देश की त्रासदी नहीं मान पाये हैं। इसका कारण यह है कि कुछ विशेष क्षेत्रों में वह लागू है और सशस्त्र बलों के अधिकारों से संबंधित है। लेकिन भ्रष्टाचार पूरे देश की समस्या है इसलिए यह मुद्दा देश की नब्ज बन गया है और अन्ना उसके प्रतीक बन गये। कोई भी आंदोलन जो किसी क्षेत्र विशेष का है वह पूरे देश का कैसे बन जाये यह सबसे बड़ी चुनौती है। हिमालय के जो आंदोलन हैं उनके साथ भी ऐसी ही चुनौती है। जब इस कार्यक्रम के लिए आयोजक मुझसे मिलने आये थे तो मैंने इनसे कहा था कि हिमालय को लेकर जो हमारी समझ है वो ये है कि देश हो या मीडिया सब हिमालय को एक पर्यटन स्थल के रूप में ही देखते आये हैं। हिमालय के सुन्दर रंग–बिरंगे फोटोग्राफ, हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं में किस चोटी पर कौन पर्वतारोही चढ़ा और नहीं चढ़ा इतना भर ही है।

बचपन में हमारे मानस में हिमालय को लेकर जो स्वाभिमान का जज्बा जगाया जाता है राजनीतिक दलों द्वारा या कविताओं में, कहानियों में, किस्सों में कि 'उच्च हिमालय पर्वत राज खड़ा पहन कर हिम का ताज.....।' हिमालय के प्रति हमारी समझ इससे आगे कभी बढ़ ही नहीं पाई। अनिल जोशी जी ने कहा कि सांसदों को इस मुहिम में शामिल करना चाहिए। पर मेरा मानना है कि बिल्कुल नहीं करना चाहिए। सांसद इस देश में कुछ नहीं कर सकते हैं। अन्ना अगर भ्रष्टाचार के खिलाफ अपने मुहिम में इन्हें शामिल करते तो उनका आंदोलन संसद भवन के गलियारों में तड़पता हुआ अपनी जान दे देता। जब तक कोई आंदोलन सांसदों की रोजी–रोटी से नहीं जुड़ेगा, रोजी–रोटी का मतलब आप समझते हैं कि वे फिर से चुन कर जा सकें, अपनी कुर्सियों पर बैठ सकें, तब तक कोई भी आंदोलन सफल नहीं होगा। अन्ना के आंदोलन ने यह बताया है कि अब लॉबिंग करने से काम नहीं चलेगा। अब सड़कों पर लोगों को उतरना पड़ेगा। अनिल जी लॉबिंग की बात कर रहे हैं कि राजनेताओं, सांसदों के बीच लॉबिंग होना चाहिए। मेरा कहना है कि लॉबिंग का जमाना चला गया। लॉबिंग का जमाना कारपोरेट सेक्टर के लिए भी खत्म हो गया।

जब से घोटालों के टेप उजागर हुए हैं। और कारपोरेट सेक्टर के लोग जेलों के पीछे पहुंचे हैं तब से उनके लिए भी दिक्कत हो गई है। हिमालय की आत्मा को आप देश के मृत शरीर में कैसे पहुंचा सकते हैं और ये बड़ी चुनौती है। आज मीडिया में हिमालय के लिए कोई जगह नहीं है। वो जगह कैसे पैदा कर सकते हैं, यह बड़ी चुनौती है। मेरा एक छोटा सा निवेदन है कि देश के बच्चों के बीच अनिल जी विभिन्न भाषाओं में ऐसी पुस्तिका बंटवा सकें जो उनको हिमालय का वास्तविक दर्शन कराये। हिमालय के साथ उनकी आत्मा को जोड़े। वह हिमालय के प्रति चेतनशील हो जाएं और हिमालय का घर–घर में प्रवेश हो जाए जैसे कि गंगा जल का होता है तो मेरे ख्याल से हिमालय दिवस की शुरूआत वहीं से होगी।

लोगों में हिमालय को लेकर आज कोई जिज्ञासा नहीं है। सुन्दर लाल जी ने वर्षों तक चिपको आंदोलन चलाया, हम लोगों ने सहयोग किया। तब मैं सर्व सेवा संघ में काम करता था। टिहरी बांध को लेकर उन्होंने इतना बड़ा आंदोलन किया। वो आंदोलन के आदमी हैं और वो बता सकते हैं कि हिमालय की क्या समस्याएं हैं और हिमालय को एक आंदोलन में कैसे बदला जा सकता है? मैं तो अब मीडिया का आदमी हूं और लिखने–पढ़ने से ताल्लुक रखता हूं। कभी आप समय देंगे तो मैं बैठ कर बात करूंगा कि इसमें मीडिया की भागीदारी कितनी जरूरी है और कैसे की जा सकती है।

**श्रवण गर्ग**
**वरिष्ठ पत्रकार**

# उत्तराखंड का विकास भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप हो

**–जोत सिंह बिष्ट**

**मैं** 1982 से पंचायतों से जुड़ा हूं। पंचायत पर काम करते हुए पंचायत के विषय पर अभी भी सीखने का प्रयत्न कर रहा हूं। मेरा सौभाग्य है कि बहुगुणा जी मेरे ही विकास खंड के निवासी हैं। अक्सर ऐसा होता है कि 'घर का जोगी जोगना, आन गांव का सिद्ध!' जब बहुगुणा जी पर्यावरण की रक्षा के लिए अलख जगाने के शुरूआती दौर में थे उसी दौर में पहली बार बहुगुणा जी से सुनने को मिला कि 'पानी बचाव।' तब हमारी उम्र कम थी। हम सोचते थे कि कैसी बातें कर रहे हैं बहुगुणा जी? गंगा में तो पानी है ही, यमुना में भी है। हमारे गाढ़–गधेरों में भी पानी है जगह–जगह पानी के स्रोत हैं पर ये पानी की बात क्यों कर रहे हैं?

इस पच्चीस–तीस साल के समय में तब से अब तक नदियों से गाढ़–गधेरों से पानी खत्म हुआ है। साथ ही जो पानी के छोटे–छोटे स्रोत हुआ करते थे वे सब खत्म हो गये हैं। अब पिछले कुछ सालों से समझ आने लगा कि निश्चित रूप से बहुगुणा जी ने आज से पच्चीस–तीस साल पहले जो बात कही थी वह सही थी। बहुगुणा की बात और उत्तराखंड के लोगों के सपने, कितने सालों में साकार होंगें ये तो मैं नहीं बता सकता, लेकिन होंगे जरूर। अगर हम लोग अपने कर्तव्यों के प्रति विमुख रहें और सोच लें कि हिमालय इतना बड़ा है इसकी रक्षा कौन कर सकता है? जो सबकी रक्षा करता है तो हम उसकी रक्षा क्या करेंगे?

मानव शरीर की जो संरचना है उसमें एक तो वो जीवाणु होता है जो शरीर की रक्षा करने का, उसके जो सैल होते हैं उन्हें पुनः रिपेयर करने का काम करता है और एक वह होता है जो उनको खत्म करने का काम करता है। ऐसे ही, हिमालय में, हम लोग जो हिमालय के नजदीक हैं, हिमालय के इर्द–गिर्द जो लोग हैं, हमारे अगर काम करने का तरीका, हमारा सोचने का तरीका हिमालय के रक्षा की दिशा में होगा, अगर हमारा उससे जुड़ाव होगा और हिमालय से जो हमको मिल रहा है उसको हम अपना समझकर के, हम भागीदार बनेंगे तो निश्चित रूप से हम लोग उस दिशा में आगे बढ़ेंगे। तब पर्यावरण की रक्षा भी होगी। पानी की रक्षा भी होगी। यहां सवाल यह भी है कि क्या ये जो पूरा शासनतंत्र है हिमालय के प्रति गम्भीर है? वन अधिनियम 1980, जो बताता है कि साल में जब फायर सीजन आएगा, तब गांव के लोग आओ और आग बुझाने के लिए खड़े हो जाओ! और बाकी के जो आठ महीने हैं उन आठ महीनों में हमको वन विभाग का आदमी बोलता है कि यह जंगल वन विभाग का है। आप उसमें प्रवेश नही कर सकते। ऐसे में जुड़ाव का रास्ता बनने के बजाए उसको तोड़ने का काम किया जाता है। फिर यह कहना कि जंगल सुरक्षित रखना तुम्हारी जिम्मदारी है, का क्या मतलब है? यहां इस नीति, इस विचार पर फिर से सोचने की जरूरत है। मैं टिहरी जिले का रहने वाला हूं। टिहरी बांध

इतना बड़ा बांध बना जिस पर साल भर में पानी का जो स्तर है न्यूनतम और अधिकतम है। मेरे घर से जब वो झील दिखाई देती है तो देखने में अच्छी लगती है। कोई मेरे घर आएगा और वहां से देखेगा तो कहेगा कि आपका घर तो बहुत अच्छी जगह पर है। मुझे तो रोज देखने को मिलती है इसलिए मेरे लिए कोई नई बात नहीं है। साल भर में उसका जल स्तर 80 मीटर वर्टीकली वैरी करता है तो उस जलाशय से हम ड्रिंकिंग वाटर की स्कीम भी नहीं बना सकते, सिंचाई तो बहुत दूर की बात है। मछली का जो व्यवसाय है उससे हम नहीं जुड़ सकते। वह झील हमारे किसी काम की नहीं और वहां पर जो बिजली बनेगी, उस झील में जो पानी भरेगा उसका उपयोग दिल्ली के लोग करेंगे। उत्तर प्रदेश के लोग करेंगे। चाहे वे बिजली के लिए करें या सिंचाई के लिए।

मेरा मानना है कि हिमालय की रक्षा का दायित्व सिर्फ वहां पर रहने वालों का नहीं है। ऐसे बांधों से मैदानी क्षेत्रों को भी लाभ मिलता है। ऐसे में सबको हिमालय के बारे में सोचना चाहिए। केवल हिमालय में रहने वाले लोगों के सोचने भर से काम चलने वाला नहीं है। जहां तक पंचायत की बात है तो कोई भी पैसा चाहे ग्राम पंचायत में आये या जिला पंचायत में आये, तो उसकी पहली प्राथमिकता में जल स्रोतों का संरक्षण और संवर्धन, वृक्षारोपण है, इसके बाद ही दूसरी चीज आती है। इसमें खूब पैसा आता है। इस देश में जल संरक्षण, जल संवर्धन और वृक्षारोपण पर अरबों रुपए लगाए जाते हैं। लेकिन उस काम को करने की जिम्मेदारी के लिए सिविल इंजीनियर बनाये गए हैं। जल विज्ञान क्या है? मुझे नहीं लगता कि सिविल इंजीनियरिंग में इस विषय को पढ़ाया जाता होगा! जब तक हम पूरे फोरेस्टेशन और जल विज्ञान में जो वाटर केमेस्ट्री है उसको समझने वाले लोगों को जिम्मेदारी नहीं देंगे, कि कैसे जल स्रोतों का संरक्षण और संवर्धन किया जाता है तब तक स्थिति ठीक नहीं होने वाली।

इन सबके नाम पर जो स्किल बनती है उसमें सिमेंट पुताई का जो काम हो रहा है और ज्यादातर पैसा जल स्रोतों पर सिमेंट पोतने पर लगाया जा रहा है। मुझे नहीं लगता हम जल संवर्धन और संरक्षण पर कोई काम कर रहे हैं। जिस ढ़ंग से सड़कें बन रही हैं और उन सड़कों के बनने से, इस साल जो बरसात हुई तो टिहरी से उत्तरकाशी जाने वाला रास्ता, पिछले ढ़ाई महीने में लगभग साठ दिन बंद रहा। ऐसी स्थिति में जिस ढ़ंग से वो ब्लास्टिंग कर रहे हैं और जिस तरह से टनल बन रहे हैं उस पर पुनर्विचार करने व बेहतर तकनीक के माध्यम से निर्माण करने की जरूरत है। उत्तराखंड में जो निर्माण कार्य हो रहे हैं उसमें उसके मुताबिक नयी तकनीक की जरूरत है। सबसे बड़ी बात है कि हिमालय व हिमालय के संपदाओं के प्रति अपनत्व बने, लोग उसको अपना समझें तो निश्चित रूप से उसका लाभ न केवल वहां पर रहने वाले लोगों को मिलेगा बल्कि पूरे देश के लोगों को मिलेगा।

**जोत सिंह बिष्ट**
**उत्तराखंड में पंचायत राज पर विगत कई वर्षों से कार्यरत**

# मिलकर लड़ें हिमालय की लड़ाई

**–अर्जुन थापा**

**जब** मैं स्कूल में पढ़ा करता था तो पिताजी मुझे दिनमान और आनंद प्रकाशन की पुस्तकें पढ़ने को दिया करते थे। तभी मैं चिपको आंदोलन और सुन्दर लाल बहुगुणा जी से परिचित हुआ। नेपाल में कहा जाता था 'हरियो धन नेपालो वन'। लेकिन जैसे–जैसे हम बड़े होते गये वन गायब होते गये। अब हमारे नेपाल में 15 प्रतिशत वन भी नहीं है जबकि 40 साल पहले यही वन नेपाल का धन था। जहां तक हिमालय बचाओ की बात है तो नेपाल में बड़े–बड़े पर्वतारोही आते हैं  कूड़ा–कड़कट रास्ते में फेंकते हुए जाते हैं। अब यह कहा जाता है कि एवरेस्ट वाली रूट में गंदगी फैल चुकी है। वहां ठंड और बर्फ के कारण कूड़ा नहीं गलता और कूड़ा जमा होता रहता है। कभी–कभार नेपाल सरकार अभियान चलाती है कि कूड़ा–कड़कट उस रूट से संकलित करके नीचे लाया जाता है। आप लोगों ने टिहरी डैम की बात कही। हमारे यहां भी बात हो रही है कि कोसी नदी में हाई डैम बनाया जाए। इस डैम से नेपाल के 20 जिलों के 10 लाख लोग विस्थापित हो जाएंगे। यह सबको मालूम है कि कोसी नदी मंसूर और बिहार में बाढ़ लाती है। हम लोगों ने कोसी की प्राकृतिक गति को रोक दिया और आप लोगों ने देखा होगा कि दो साल पहले नेपाल और बिहार के लाखों लोग कोसी के प्रकोप से प्रभावित हुए। कोसी से कभी भी महा प्रलय हो सकता है ऊपर से भारत और नेपाल की सरकार वहां पर हाईडैम बनाने की बात कर रही है।

भारत और नेपाल दोनों देशों के पर्यावरणविद् इसका विरोध कर रहे हैं। हमारे हिमांशु भाई ने कहा कि हमारी सरकारें आर्मी और पुलिस लगाकर हमारे संसाधनों का दोहन करेंगी। अभी हाल ही के दिनों की बात है आपके देश की कम्पनी सतलुज और जीएमआर कम्पनी हाईड्रो में गई है। सेती नदी में जीएमआर का पांच–सात सौ मेगावाट का, बिजली बनाकर नेपाल के सबसे पिछड़े पश्चिम के पहाड़ों में जीएमआर नाम से एक ऑफिस खोला। स्थानीय लोगों ने उस ऑफिस को तोड़ दिया। उनका कहना था कि हमें कोई मुआवजा नहीं मिल रहा है। ऐसी स्थिति में भारत सरकार ने नेपाल सरकार को कहा कि हमारी मल्टीनेशनल कम्पनी आप के वहां जाती है, हाईड्रो से बिजली बनाने के लिए, पर आपके लोग विरोध करते हैं। तब नेपाल सरकार, जो खनाल जी की सरकार थी, ने एक स्टेटमेंट दिया कि पहाड़ों में जितने भी हाइड्रोपावर लगाये जाएंगे यानी उन संसाधनों का दोहन करेंगे, नेपाल की पुलिस और आर्मी उस कम्पनी को प्रोटेक्शन देकर उस कम्पनी को काम करने देंगे। अब इस तरह की पॉलिसी नेपाल सरकार ला रही है। यहां जो बात हिमांशु भाई ने कही वह बात हमारे यहां लागू हो गई है। नेपाल में सड़क और बिजली की कमी थी, इसलिए संसाधनों को लूटा नहीं जा रहा था। आज हिमाचल प्रदेश का पानी फाइव स्टार होटल और एरोप्लेन में देखने को मिलता हैं। हिमालय वाटर

नाम से वहां का पानी बड़ी–बड़ी मल्टीनेशनल कम्पनियों के हाथ में है। अब हिमाचल का पानी कम्पनियों के कब्जे में है। मुझे लगता है दस साल के अन्दर नेपाल के हिमालय का पानी भी मल्टीनेशनल कम्पनियों के कब्जे में होगा और वहां के लोगों को ही अपना पानी खरीदना पड़ेगा। इस तरह की परिस्थितियां नेपाल में अब उत्पन्न हो रही हैं। हिमालय में पहले जिस तरह बर्फ गिरा करती थी अब वह स्थिति भी नहीं रही। अब बहुत कमी आ गई है। अब लैंडस्लाइड जैसी आपदाएं ज्यादा होने लगी हैं। भारत, नेपाल में और भूटान में छोटे–छोटे ताल होते हैं। वे ताल पानी को संरक्षित करते हैं। अब स्थिति यह है कि वे ताल भी विनाश लाएंगे यूपी और बिहार में, क्योंकि इसके साथ भी छेड़छाड़ हो रही है। चुनौती हमारे सामने है और हम समझते हैं कि हमको हिमालय बचाना है तो भूटान, नेपाल और भारत जैसे देश तो हिमालय का देश है तो सबको एक साथ हिमालय को बचाने के लिए लड़ना पड़ेगा तभी हम कुछ बचा पाएंगे, नहीं तो हमारे हाथ से सब कुछ निकल जाएगा।

**अर्जुन थापा**
**अध्यक्ष गांधी पीस संस्थान, नेपाल**

# THE FUTURE OF HIMALAYAS IS AT STAKE

**P.D. Rai**

**Having** a Himalaya Day, has been a very good idea. The organizers were congratulated for persisting with the idea of the Himalayas. There has been a completely new thinking on eco-services, and the Himalayas has always served the people of India in a very major way in terms of giving eco-services.

For instance, the Teesta water, which emanates from the glaciers of Sikkim, flows out of Sikkim and goes into Bangladesh, has become the cause of disagreement between Bangladesh and Mamata Banerjee. The question therefore that arises is, whose water is it - the people of Sikkim, Bengal, or Bangladesh? I think the question of environmental justice needs to be examined. I leave this thought with you because everybody needs air, water and land. Therefore, this whole issue of land, water and air has always remained a bone of contention amongst the peoples.

The whole aspect of the Working Group on mountains was covered. In terms of mountains, the Working Group is the Planning Commission. The planning of our country should take into consideration the geographical aspects. There should be separate Working Groups - each for mountains, oceans, coastal regions, deserts, and on different aspects. Working Groups could be in different ways because of the design of the mountains today, or of anything that happens in the mountains – e.g., the development, the challenges of the people who live in the mountains is completely different.

For example, in the case of the National Highway-31A, it starts from Siliguri and goes upto Nathula Pass. From Nathula Pass, it is supposed to go into Tibet and China. This piece of road, which is about 160 kms, is under the Border Roads Organization (BRO). For the last 45 years, ever since the 1962 war with China, BRO has not been able to deliver a good mountain road till today and may be for the next 50 years they will not be able to give us another road until and unless they change the design of building roads in the mountains. Today, building roads in mountains is not an issue because technology is available everywhere in the world. However, if the mountain road sinks, then they will come to repair it. One does not have to

be an engineer; they will simply fill up the road with rubble and cover it with tar. Next year again when it rains, the roads will once again go down. So when is the infusion of appropriate technology? Therefore, we are asking for a Working Group on mountains to look into the issues through a new lens – of mountain dynamics, mountain specificities, and the people of the mountains – how do they live.

Tamtaji had talked about tourism – what kind of tourism can be done in the mountains; what kind of power generation, methodologies are there in the mountains; do we need to build big dams or can we work with smaller power generation equipment. Appropriate technologies are available - look at the eco-services.

While talking about sustainability, I will narrate a small incident that took place recently. Being interested in renewables, I went to see the solar power generation in Jodhpur. There were some 5-megawatt units; about 3 – 4 of them were being put up. I also wanted to see the wind power that was there.

In the Question Hour in Parliament, one of our colleagues from Jaisalmer told Mr. Farooq Abdullah, Minister for Renewable Energy, “Sir, we do not want wind power – all those ‘power chakkis’ in Jaisalmer because they are affecting our tourism”. Jaswant Singh, who is also from that area, got up and told the Minister, “Please remove those because all our tourism is getting spoilt in Jaisalmer”. I went to see whether it is really true, and sure enough everybody says ‘wind power is a very good idea, but not in my backyard’.

One has to see what is appropriate – whether tourism is better because valuables are the primary target or whether one wants to meet the energy objective. Jodhpur is completely dependent for its water on the Indira Canal. In the hotel in which we were staying, there was a nice, big swimming pool. I asked somebody, ‘There is no water shortage in Jodhpur? How can you have a swimming pool here?’ It was quite inappropriate – the water was coming from afar, going through Indira Canal, coming to a desert region, and ending up in a swimming pool! We should develop our priorities first.

Please think 25 years from now. It is not just about sitting here and saying ‘Himalayas is great, we need the Himalayas’. It is about saying what is appropriate in terms of development and sustainability of our development, so that the eco-services in an environmentally justified manner and with environmental justice is given to the people of this country.

P.D. Rai
(M.P. - Sikkim)

* * * *

# WE HAVE TO SAVE THE HIMALAYAS

**- KRISHNA KHANAL**

**This** is a rare opportunity for me because I am here to attend a meeting on South Asia Board. Since I am already in Delhi, my dear friend Vijay Pratapji asked me to attend the Himalaya Day. It is an important event for us too. We do not have this type of event in Nepal although we talk a lot on saving the Himalayas.

I used to see the Himalayas in my childhood, but now it is totally changed. I do not see cascades of snow in the Himalayas. It has drastically been reduced. Only in the winter we see some amount of snow; but during the rest of the year it has reduced drastically. So it may not be a serious problem if we continue to ignore the prudence of Himalayas. There won't be much snow and there won't be much water also.

We earn a lot of revenue from the expedition team, but there is weaker investment in central Himalayas. We lie in the central part of the Himalayan region, most of the highest peaks also lie in the central zone of the Himalayas, and we are exploiting the Himalayas for our own sake, in terms of revenue generation and are not spending on its protection.

When we travel at the bottom of the Himalayas, we find almost fertile land, warm weather and vegetation in the plain areas, and the moment you go ahead it changes. You can see the Himalayas right from the bottom to the top. There is a lot of bio-diversity, and I do not know how it will be sensitized because in most part of the Himalayan zone the area is very underdeveloped in terms of infrastructure. Sometimes I feel proud that without the importance of development, the area is reserved, but not at the mountain peak level.

Today, I would also like to share the changes that Nepal is undergoing. For example, this day coincides with the birthday of our great leader, late B.P. Koirala, who is considered as the son of Nepali soil. In fact, he created a lot of awareness and started the whole idea of modern Nepal. Hence, I think today is very much important for us.

In the past Nepal used to be known as the Himalayan Kingdom. It is no more a Kingdom. Nepal is a Republic now. The new name is Republic of Nepal.

I would like to congratulate you and express my best wishes for your success in the movement.

Nepal is at the bottom of the Himalayas, and unless we save the Himalayas, any serious degradation in the Himalayan atmosphere would first seriously affect Nepal. Without Himalayas Nepal cannot exist.

Prof. Krishna Khanal
(Political Scientist, Tribhuvan University, Kathmandu, Nepal)

'हरित स्वराज' का विचार मनुष्य से प्रकृति के रिश्ते को समाज के राजनैतिक, सामाजिक, साँस्कृतिक पक्षों के लोकतान्त्रिक आधार से जोड़ता है। 'दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद' (सैडेड) विभिन्न वैचारिक प्रवाहों को संजो कर उनके बीच संवाद को प्रोत्साहित करता है ताकि 'हरित स्वराज' के बहुआयामी विचार की गहराई तक पहुँचा जाए। दक्षिण एशिया के संदर्भ में 'हरित स्वराज संवाद' ऐसे व्यापक प्रवाहों का हिस्सा है जो स्थानीय समुदायों से लेकर देश व दुनिया के स्तर पर मनुष्य जीवन के लोकतान्त्रीकरण के लिए प्रयासरत् हैं। यह प्रकल्प सेन्टर फॉर द स्टडी ऑफ डवेलपिंग सोसाइटीज़, लोकायन, केपा व सिएमनपूँ फाऊंडेशन (फिनलैण्ड) की साझी सृजनात्मक पहल के बतौर शुरू हुआ था।

'दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद' एक चौपाल है। इसके द्वारा प्रकाशित पुस्तकें लेखक के विचार प्रस्तुत करती हैं ताकि समाज में चल रहे संवादों की झलक मिले। संवाद की इस प्रक्रिया को बढ़ावा देने के लिए पाठकों से गुज़ारिश है कि वह इसमें भागीदार बनें व अपने विचार हमें लिख भेजें।

# पुस्तिका परिचय

'हिमालय बचाओ' हरित स्वराज संवाद (सेडेड) की ओर से निराशा और मजबूरी में किया गया प्रकाशन है। 'हरित स्वराज संवाद' ने अनेकों संस्थाओं, आंदोलन समूहों, एवं बौद्धिकों द्वारा की गई पहलों के संयोजन–आयोजन में हिस्सा लिया है। 9 सितम्बर 2009 से हिमालय दिवस का वार्षिक सिलसिला हेस्को एवम् विभिन्न संगठनों के साथ चलाया है। उत्तराखंड चौपाल एवं हिमालय नीति संवाद आदि नामों से गोष्ठियां आयोजित की हैं। हम उत्तराखंड के प्रायः सभी नामी–गिरामी बौद्धिकों एवं हिमालयी संरक्षण–संवर्द्धन आंदोलन से जुड़े वरिष्ठजनों की शरण में हिमालय को जानने, समझने तथा इनके संदेशों को जन मानस तक पहुंचाने के लिए गए हैं। लगता है कि कहीं हमारे में काल गति और हस्तक्षेप की संभावनों को समझने की क्षमता में कमी रही। शायद न ही हममें पर्याप्त विनम्रता, बौद्धिक उदारता और धैर्य था जिससे कि हम किसी व्यापक, सक्रिय जनों की ऐसी जमात का हिस्सा बन सकें जो पूरे हिमालय की जनता को समबोध एवं समलक्ष्य की मनोदशा में ला सके ताकि हिमालय बचाने के लिए एक व्यापक उपक्रम जनता अपने हाथ में ले।

यह पुस्तिका, हरित स्वराज संवाद या अन्य महत्वपूर्ण समूहों द्वारा आयोजित गोष्ठी, सभाओं आदि, जिसमें हम लोग शामिल रहे, का एक समग्र घोषणापत्र नहीं है और न ही उनका समग्र या प्रातिनिधिक दस्तावेज है। यह तो एक छोटा सा उदाहरण है, यह जांचने के लिए कि हिमालय संरक्षण–संवर्द्धन की राजनीति में हम कहाँ खड़े हैं। दस्तावेज में जिन भाषणों का ट्रांसक्रिप्ट दिया गया है वह सभी राजनैतिक या सांस्थानिक सत्ता के प्रभुवर्ग के लोग हैं। भाषणों में हिमालय के प्रति सभी के सरोकार की घोषणा स्वयं स्पष्ट है। क्या भाषण देने वाले सभी लोग अपनी–अपनी सत्ताओं का भरपूर उपयोग अपनी ही 'घोषणाओं' और सरोकारों की दिशा में कर पाये हैं? इस पर निर्णय देने के बजाय हम सभी अपने भीतर झाँकें कि कमी कहाँ रह जाती है कि सत्ता चाहे किसी की भी हो, दिशा हिमालय संरक्षण–संवर्द्धन की नहीं है।

अंत में हरित स्वराज संवाद की ओर से इतना ही वायदा है कि अपनी तमाम सीमाओं और क्षमताओं के साथ हम किसी भी व्यापक उपक्रम का हिस्सा बनने के लिए प्रस्तुत हैं, जो हिमालय संरक्षण, संवर्द्धन और इस क्षेत्र की जनता के कल्याण की लोकनीति के लिए शुरू किया जायेगा।

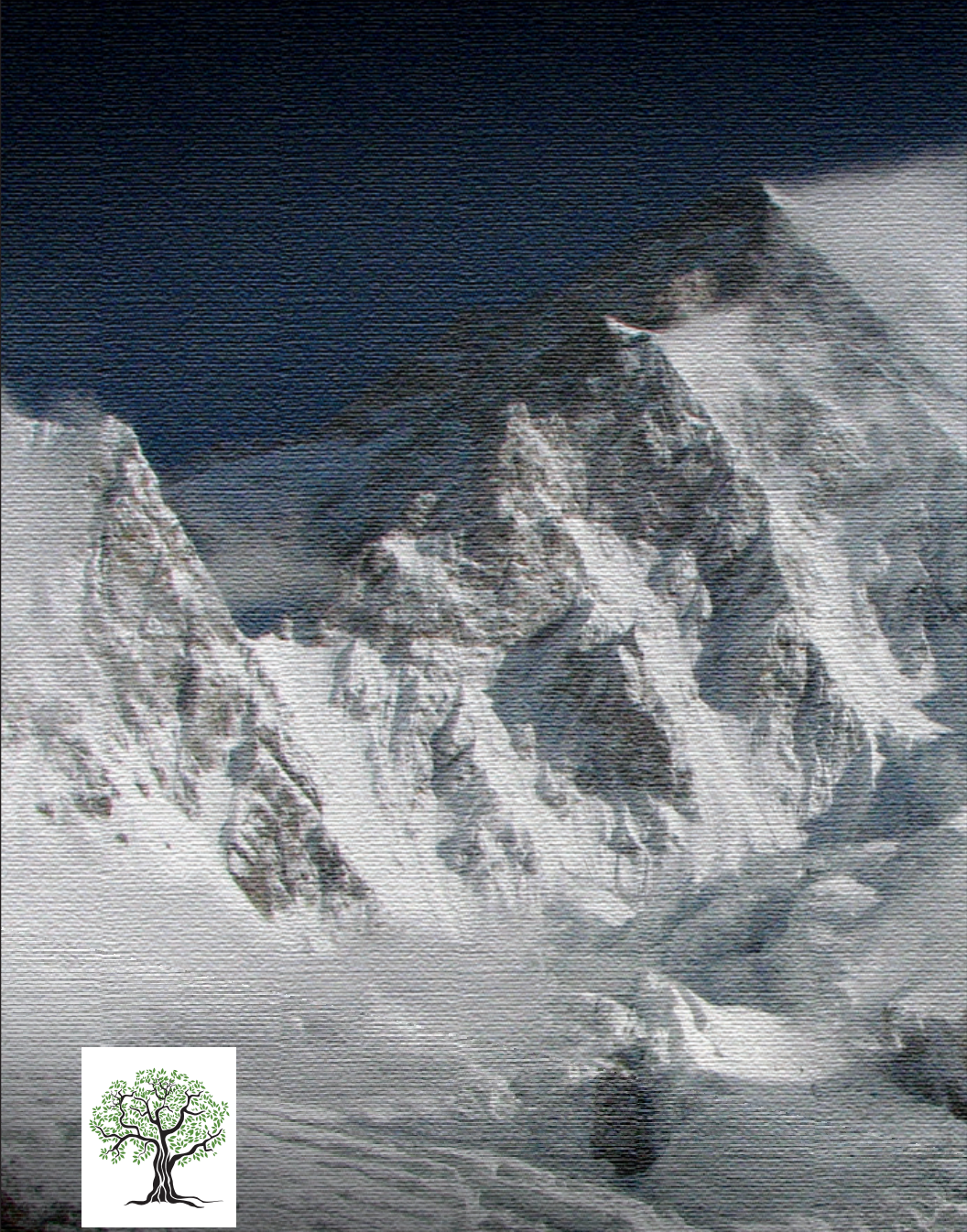

दक्षिण एशियाई हरित स्वराज संवाद

**South Asian Dialogues on Ecological Democracy (SADED)**

www.saded.in

ISBN
978-93-81144-66-4